RESEARCH PAPER | History | Volume : 5 | Issue : 3 | March 2015 | ISSN - 2249-555X

Poorv Madhyakalin Hariyana Ki Arthvyavstha Ka Chintan

KEYWORDS

Dr. Bhagat Sinh

Associate Professor, History of Ancient India, Culture and archeology Department, Kurukshetra University, Kurukshetra

भारत के इस भू-भाग हरियाणा के नाम की व्याख्या कई प्रकार से की गई है। 1863 ई. की हिसार जिला सैटलमैंट रिपोर्ट के अनुसार पहले यह 'हरियालवन' था जिससे बिगड़ कर हरियाणा बन गया। डॉ. हरिराम गुप्ता के विचार में वैदिक काल में यह क्षेत्र आर्यों का मूल निवास स्थान होने के कारण 'आर्याणा' कहलाया जिससे कालांतर में हरियाणा बन गया।

विक्रम संवत् 1337 के पालम-बावली[1] अभिलेख में इस प्रदेश का नाम 'हरियाणक' तथा विक्रम संवत् 1373 के लाडनूं (जोधपुर) अभिलेख में 'हरितानक' दिया गया है। 1328 ई. के दिल्ली संग्रहालय अभिलेख[2] में इस प्रदेश के लिए हरियाणा शब्द का उल्लेख हुआ है। स्कन्दपुराण में इसका नाम 'हरियाला' मिलता है।[3] इन साक्ष्यों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि लगभग 14वीं सदी तक इस क्षेत्र को भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा जाता रहा और इसके बाद इसे ठीक हरियाणा नाम से पुकारा जाने लगा।[4]

वर्तमान हरियाणा क्षेत्र और इसके आसपास के भू-भाग को प्राचीन काल में कई प्रादेशिक नामों से पुकारा गया है। मनुस्मृति के अनुसार सरस्वती और दृशद्वती नदियों के बीच का प्रदेश 'ब्रह्मावर्त' कहलाता था। महाभारत काल में प्रतापी राजा कुरु के नाम से सम्बन्ध होकर ब्रह्मावर्त का भू-भाग कुरूक्षेत्र कहलाया। छठी शताब्दी ई. पू. के 16 महाजनपदों में कुरु भी एक महाजनपद था।[5] विभिन्न साहित्यिक श्रोतों से ज्ञात होता है कि हरियाणा का सम्पूर्ण क्षेत्र प्राचीन समय के ब्रह्मऋर्षिदेश, आर्यावर्त, मध्यदेश, उत्तरापथ, श्रीकंठ आदि का भाग था। जो विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों का भाग रहा है। हरियाणा के विभिन्न भागों से प्राप्त यौधेय सिक्कों पर 'योधैयानां बहुधान्यके' लेख अंकित मिलने के आधार पर कुछ विद्वानों के अनुसार इस क्षेत्र को 'बहुधान्यक' प्रदेश कहा जाता था।[6]

भौगोलिक स्थिति:

हरियाणा भारत के उत्तर में 27° 32' से 30° 54' उत्तरी अक्षांश तथा 74° 27' से 77° 40' पूर्वी रेखांश के मध्य स्थित है। इस त्रिकोणाकार राज्य का क्षेत्रफल 44222 वर्ग किलोमीटर है। इसके उत्तर में हिमाचल प्रदेश, उत्तर-पश्चिम में पंजाब, दक्षिण-पश्चिम में राजस्थान, तथा पूर्व में दिल्ली व उत्तरप्रदेश के राज्य स्थित है। यमुना नदी इसकी पूर्वी सीमा निर्धारित करके इसे उत्तर-प्रदेश से अलग करती है। भौगोलिक दृष्टि से उत्तर-पश्चिम में इसकी सीमा वग्गर नदी निर्धारित करती है। इसके उत्तर-पूर्व में शिवालिक पहाड़ियां, पूर्व में यमुना नदी, दक्षिण में अरावली पर्वत तथा दक्षिण-पश्चिम में थार का रेगिस्तान है।[7] धरातलीय आधार पर इस प्रदेश को तीन प्राकृतिक भागों में बांटा जा सकता है। प्रथम भाग में शिवालिक की पहाड़ियाँ आती है जो अंम्बाला जिले में दक्षिण-पूर्व दिशा में फैली हुई है। यहाँ की तीन प्रमुख नदियाँ वग्गर, मारकण्डा और चितंग है। द्वितीय भाग में वग्गर और यमुना का मध्य भाग आता है। इसके ऊपरी भाग को 'बांगर' तथा निचले मैदानी दोआब क्षेत्र को 'खादर' कहते है। तृतीय भाग में अरावली पर्व. तमालाओं का शुष्क भाग आता है। यहाँ की प्रमुख नदियाँ साहिबी, कृष्णावती और दोहन है।[8]

हरियाणा प्राचीन काल से ही कृषि प्रधान प्रदेश रहा है। इस विशाय की पुष्टि ब्राह्मण और सुत्र ग्रन्थों में कुरूक्षेत्र की प्रशंसा करते हुए की गई है। महाभारत काल में गौरक्षा तथा कृषि मुख्य कर्म थे। अनेक यूनानी लेखकों द्वारा भारतीय भूमि की उर्वरता की प्रशंसा की गई है। 'अभिधान रत्नमाला' में भूमि का वर्गीकरण किया गया है, जैसे- उर्वरा, खिल, मरु, मृत्सा आदि। अलग-अलग भूमि विभिन्न प्रकार की फसलों के लिए उपयोगी मानी जाती थी। अरब लेखकों ने उत्तरी भारत की भूमि को अत्यधिक उपाजाऊ बताते हुए नारियल, बादाम, संतरा, अंगूर, नींबु आदि फसलों का विवरण दिया है।[9] सोमदेव के अनुसार[10] हरियाणा प्रदेश में स्थित यौधेय जनपद की मिट्टी काली थी जो विभिन्न फसलों के लिए अत्यंत उपजाऊ थी जैसे धान, गन्ना कपास इत्यादि।

मिट्टी की किस्मों के आधार पर वराहमिहिर ने भूमि की चार प्रमुख कोटियाँ बतलाई है, जैसे सफेद, लाल, पीली और काली। भूमि का एक प्रकार 'अप्रदा' भी था, जिसका उल्लेख समकालीन अभिलेखों में भी मिलता है। वास्तु नामक भूमि का उपयोग सम्भवत: बस्तियां बसाने के लिए किया जाता था। हयूनसांग ने भौगोलिक दृष्टि से भारत को पांच भागों में विभाजित किया है। प्रत्येक भाग की मिट्टी की प्रकृति व विशेषता बताते हुए वह लिखता है कि भारत का उत्तरी भाग पहाड़ी है, जहाँ की मिट्टी काली है। पूर्वी भाग उपजाऊ व मैदानी है। पश्चिमी भाग की मिट्टी पत्थरीली तथा दक्षिणी भाग में उत्पादन की प्रचुरता है।[11] इसके अतिरिक्त हयूनसाँग ने विभिन्न प्रदेशों की मिट्टी और वहां के प्रमुख उत्पादनों का विस्तृत विवरण भी दिया है।

पूर्वमध्य युग में हरियाणा में उत्पन्न होने वाली विभिन्न मुख्य फसलों का विवरण हमें साहित्यिक ग्रन्थों हयूनसाँग के वृतात, हर्षचरित तथा समकालीन अभिलेखों से ज्ञात होता है, कि प्रदेश में कृषि की उन्नत अवस्था थी। हयूनसाँग से हमें सातवी सदी में जो पैदावार होती थी, उसकी जानकारी मिलती है, जैसे चावल, गेहूँ, अदरक, सरसों, फलों में आम, तरबुज, नारियल, सेब, अनार आदि।[12] तोमर व चौहान शासकों के समय इस क्षेत्र में खरीफ की फसलों में ज्वार, बाजरा, कपास व मोठ होती थी। कुरूक्षेत्र और दिल्ली के क्षेत्र में मुख्यत: गेहूँ, गन्ना, चावल, दाल आदि फसलों की अच्छी पैदावार होती थी।

अरब यात्री सुलेमान ने तत्कालीन उत्तरी भारत की मुख्य फसलें चावल व गेहूँ की चर्चा की है।[13] भारतीय कृषकों को कृषि के विभिन्न उपकरणों का ज्ञान था। समय के साथ उपकरणों के रूप, गुण व नाम में परिवर्तन होता गया। हल प्राचीन काल से ही कृषि का मुख्य उपकरण माना जाता है। इसका उपयोग भू-कर्षण के लिए किया जाता था। जहां से कृषि की आरंम्भिक प्रक्रिया शुरू होती है, उसी समय से हल को पवित्र और पुज्य भी समझा जाता था।[14] बाणभट्ट ने हर्षचरित में श्रीकण्ठ जनपद और स्थानेश्वर के वर्णन में हलों द्वारा क्षेत्र कर्षण का उल्लेख किया है। अमरकोश में हल एवं जुए को जोड़ने वाले भाग को 'ईषा' कहते थे। हल बैलों द्वारा ही खींचे जाते थे।

बाण ने श्रीकण्ठ जनपद में बैलों द्वारा खेती जुते जाने का उल्लेख किया है। कृषि के दुसरे उपकरणों में सिंचाई के लिए रहट, पुखड़, मोट आदि यन्त्रों का प्रयोग होता था जिन्हें घंटी यन्त्र कहते थे। गन्ने को कोल्हू में पिरकर उसके रस से गुड़ एवं शक्कर बनाया जाता था। कृषि में बैलगाड़ियों का विशेष महत्व था। इसमें फसलों को ढ़ोने व अन्य भार को दुसरे स्थानों पर ढ़ोने के लिए उपयोग किया जाता था। कृषि की पैदावार को बढ़ाने के लिए खाद का उपयोग किया जाता था। वैदिक काल से लेकर पूर्वमध्यकाल तक उपलब्ध साहित्यिक ग्रंथों एवं विधि संहिताओं में हमें कृषि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के लिए खादों के उल्लेख मिलते है। गोबर का प्रयोग खाद के रूप में विशेष रूप से किया जाता था।[15] अभिलेखों में सरस्वती नदी को पवित्र माना गया है। यह हरियाणा प्रदेश की प्रसिद्ध नदी थी, जिससे सिंचाई की जाती थी। बाणभट्ट ने श्रीकण्ठ जनपद का उल्लेख करते हुए लिखा है कि गाँव के चारों और सर्वत्र जलाशय और महाशोत बने हुए थे।[16] कृत्रिम साधनों में नहरें भी सिंचाई का साधन थी। सिंचाई के अतिरिक्त नहरें बाढ़ के पानी को सींचकर फसलों को नष्ट होने से बचाती थी। इन्हें जल निर्गम भी कहा गया है। इस प्रकार पूर्वमध्यकाल में इस क्षेत्र में सिंचाई के प्रचुर साधनों का सदुपयोग करके उन्नतिशील कृषि उद्योग की

Volume : 5 | Issue : 3 | March 2015 | ISSN - 2249-555X

स्थापना की जा रही थी।

पूर्वमध्यकाल में कृ्टि के साथ-साथ पद्युपालन भी मुख्य व्यवसाय था। प्रारंम्भ में कृ्टि पद्युओं पर निर्भर थी। पद्यु न केवल कृ्टि व यातायात में ही सहायता देते थे अपितु यथासमय भोजन का भी काम देते थे। इस काल के दौरान इस क्षेत्र में गाय, भैंस, बकरी, घोड़े, खच्चर, बैल तथा ऊँट पालतू पद्यु थे। हरियाणा में उत्खन्न के माध्यम से प्राप्त होने वाली पद्युओं की हड्डियों तथा अनेक पुरास्थलों से प्राप्त मिट्टी, धातु व पत्थर की पद्यु मूर्तियों से ऐतिहासिक हरियाणा में पद्यु-पालन पर प्रकाद्या पड़ता है।[17]

पूर्वमध्यकाल में व्यापार का विस्तार हुआ। इस काल में व्यक्ति की आवद्यकताओं के अनुरूप विभिन्न वस्तुएँ उत्पादित की जाती थी। कृ्टि एवं पद्युपालन के अतिरिक्त पूर्वमध्यकाल में राज्य की समृद्धी का मुख्य आधार व्यापार-वाणिज्य था। व्यक्ति अपनी भौतिक आवद्यकताओं की पूर्ति स्वयं नहीं कर सकता है, उसे दुसरों पर निर्भर रहना पड़ता है। इन्हीं आवद्यकताओं की पूर्ति व्यापार के माध्यम से होती है। साधारणतया वस्तुओं का क्रय-विक्रय व्यापार कहा जाता था। निद्यीथचूर्णि में विक्रय की जाने वाली वस्तुओं को पण्य और क्रयाणक कहा गया है।[18] साहित्यिक ग्रन्थों में दो प्रकार के व्यापारियों का उल्लेख मिलता है। स्थानीय व्यापारी व सार्थवाह। स्थानीय व्यापारियों के तीन वर्ग थे, जिनमें वणिक, गाथापति व श्रे्ठी। ये नगरों तथा गाँवों में व्यापार करते थे। व्यापारियों का दुसरा वर्ग सार्थवाहों का था, जो स्थल व जल मार्गो से भारत के आन्तरिक व विदेद्यी व्यापार को समृद्ध करते थे।[19] व्यापार के उद्देद्य से एक साथ यात्रा करने वाले व्यापारियों का समूह सार्थ कहलाता था और सार्थ का नेतृत्व करने वाला सार्थवाह कहलाता था।

स्थानेद्वर की समृद्धि और सम्पनद्यीलता का उल्लेख हयूनसाँग ने भी किया है।[20] वाराणसी के लोग व्यापार-वाणिज्य के कारण काफी धनी थे। पेहवा (882ई.) अभिलेख में उल्लेख मिलता है कि देद्य के विभिन्न स्थानों से अद्व व्यापारी वहाँ इक्ट्ठे होते थे, और घोड़ों का क्रय-विक्रय करते थे। पेहवा प्राचीन काल से ही अद्व व्यापार का प्रमुख केन्द्र माना जाता था। पुराणों तथा महाभारत में इस नगर को पवित्र बताया गया है।[21] यहां से कन्नौज के राजा भोज तथा उसके पुत्र महेन्द्रपाल के दो अभिलेख भी प्राप्त हुए है। पेहवा नगर तत्कालीन समय में भी द्यिव, वै्णव तथा कार्तिकेय मन्दिर के कारण प्रसिद्ध है।

कद्मीर व सिन्ध के व्यापारी घोड़ों और गायों का व्यापार करते थे। कामरूप व कलिंग के जंगलों से हाथी पकड़कर लाये जाते थे। बाण के अनुसार स्थानेद्वर नगरी अपनी विद्यि्टता के लिए प्रसिद्ध थी। वह लिखता है कि स्थानेद्वर की प्रसिद्धि का प्रधान कारण उसका व्यापारिक केन्द्र भी होना था। वहां के अधिकतर निवासी व्यापारी थे जो दुसरे देद्यों से सामान एकत्रित करके बेचते थे।[22] कान्यकुब्ज जनपद अपनी दुर्लभ वस्तुओं के लिए प्रख्यात था जो दुरवर्ती प्रदेद्यों के व्यापारियों से क्रय किए जाते थे।[23] अयोध्या निवासी विविध द्यिल्पों में अग्रणी थे। इस प्रकार के साहित्यिक व अभिलेखिय उल्लेखों से स्प्ट है कि पूर्वमध्यकाल में हरियाणा का देद्य के अन्दर विभिन्न व्यापारिक केन्द्रों से आपसी व्यापार होता था। जो यहां के लोगों के लिए विभिन्न प्रकार की आवद्यकता पूर्ति में सहायक था।

पूर्वमध्यकालीन ग्रन्थों में हाथी दाँत, रस वाणिज्य, लाख, चँवर, वस्त्र, कुम्भ. कारों द्वारा निर्मित वस्तुएँ तथा दैनिक जीवन के उपयोग में आने वाली अन्य वस्तुओं के व्यापार का उल्लेख प्राप्त होता है। इसके साथ-साथ धन-धान्य, हिरण्य, सुवर्ण, मणिमुक्ता-प्रवाल, पक्षी एवं पद्युओं के उल्लेख से भी स्प्ट होता है कि इनका भी क्रय-विक्रय प्रादेद्यिक व्यापारिक केन्द्रों में होता था।[24] अलबेरूनी ने 15 मार्गो का उल्लेख किया है जो की कन्नौज, मथुरा, बाड़ी, बयाना, धार और गुजरात से देद्य के विभिन्न मार्गो को जाते थे। इनमें से एक प्रमुख मार्ग हरियाणा के पानीपत से अटक, काबुल और गाजा तक पहुंचता था। पूर्वमध्यकालीन ग्रन्थों में उल्लेखित है कि तत्कालीन बड़े-बड़े भ. ारतीय व्यापारी अधिक लाभ की लालसा से समुद्री मार्गो से होकर जलयानों द्वारा विभिनन देद्यों में जाते थे। अलमसुदी ने लिखा है कि भारत के पोत बसरा, सिरफ, ओमन, जावा और चंम्पा से होकर कैन्टन तक जाते थे।[25]

पूर्वमध्यकाल तक समाज में विभिन्न उद्योग धन्धे विकसित हो चुके थे। उनके माध्यम से लोग जीवन-यापन कर रहे थे।[26] बाण के ह्र्ा चरित से पता चलता है कि वस्त्र उद्योग काफी विकसित था। इस काल में धातु उद्योग को काफी बढ़ावा मिला। धातुओं में लोहा, तांबा, पीतल, टीन, चाँदी, सोना आदि का प्रयोग होता था।[27] अलबेरूनी ने थानेसर नगर में स्थित 'चक्रास्वामी' की ताम्र मूर्ति का उल्लेख किया है।[28] इस काल में द्यिल्पियों द्वारा बड़े वैभव पूर्ण मन्दिरों व किलों का निर्माण किया गया, जो कला के अद्भभूत नमुने हैं। इनमें कालयत के मन्दिर, पेहवा का वि्णु एवं कार्तिकेय मन्दिर प्रमुख है। इस काल की मूर्तियां भी कलात्मक बनी हुई है। हाँसी का किला भी इस युग की स्थापत्य कला का प्रमुख उदाहरण है।[29] इस प्रकार विभिन्न अवद्यो्ाों से पता चलता है कि पूर्वमध्यकाल में हरियाणा की स्थापत्य एवं कला उन्नत अवस्था में थी।

REFERENCE

1 एपिग्राफिका इंड़िका, वाल्यूम-ट, पृ. 34 द्य 2 उपरोक्त, वाल्यूम-1, पृ. 93-105 द्य 3 यादव, के.सी., 'हरियाणा इतिहास एवं संस्कृति', भाग-1, पृ.7 द्य 4 फड़के, एच.ए., 'हरियाणा एन्शियट एण्ड़ मिडिवल', पृ. 1 द्य 5 फड़के, एच.ए., उपरोक्त, पृ. 21 द्य 6 यादव, के.से, उपरोक्त, पृ. 38 द्य 7 यादव, के.सी., 'हरियाणा इतिहास एवं संस्कृति', भाग-1, पृ. 1 द्य 8 यादव, के. सी. व फोगाट, एस.आर., हरियाणा एतिहासिक सिंहावलोकन, पृ. 05 द्य 9 उपाध्याय, अमित कुमार, पूर्व मध्यकालीन आर्थिक चितन्तन, पृ. 21 द्य 10 जिनसेन, 'आदिपुराण', 16/119 द्य 11 मिश्र, जयशंकर, 'ग्यारहवीं सदी का भारत (अलबेरूनी के आधार पर एक सांस्कृतिक अध्ययन) पृ. 236-37 द्य 12 सोमदेव, 'यशस्तिलक, कृष्ण भूमयः, पृ. 13 द्य 13 वाटर्स, थामस, 'ऑन ह्वेनसांग ट्रेवल्स इन इण्ड़िया, पृ. 140-41 द्य 14 बाणभट्ठ, 'हर्षचरित', पृ. 94-96 द्य 15 मिश्र, जयशंकर, उपर्युक्त, पृ. 237 द्य 16 नारंग, मधु, 'ए कल्चरल स्ट्ड़ी ऑफ निशीथचूर्णी, पृ. 235 द्य 17 अग्रवाल, वासुदेव शरण, 'हर्षचरित एक सांस्कृतिक अध्ययन', पृ. 31 द्य 18 जैन, जगदीश चन्द्र, 'आगम साहित्य में भारतीय समाज, पृ. 128-129 द्य 19 सूरजभान, 'एक्सकवेशन एट सुघ', 1964-65, ज.आ.ह.स्ट., भाग-9, पृ. 41 द्य 20 निशीथचूर्णि, भाग-3, गाथा 3842 द्य 21 उपाध्याय, अमित कुमार, उपरोक्त, पृ. 79 द्य 22 वाटर्स, थामस, 'ऑन हवेनसांग ट्रेवल्स इन इण्ड़िया, पृ. 314 द्य 23 कनिंधम, आर्क्योलोजिकल सर्वे रिपोर्ट, खण्ड-2, पृ. 224 द्य 24 हर्ष चरित, सर्ग-3 द्य 25 मजूमदार, आर.सी., 'दि एज ऑफ इम्पीरियल कन्नौज', पृ. 40 द्य 26 उपाध्याय अमित कुमार, उपरोक्त, पृ. 87 द्य 27 समराइच्चकहा, 6, पृ. 39 द्य 28 मिश्र, जयशंकर, 'ग्यारहवीं सदी का भारत, पृ. 10 द्य 29 फोगाट, एस.आर., 'इंसक्रिप्सन ऑफ हरियाणा', पृ. 33 द्य